ISSN No. 2349-4654
नाद - नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक
वर्ष : 1, अंक : 1, नवम्बर 2014

तराना विधा का एक विशिष्ट रूप तथा उस पर उस्ताद अमीर खाँ का प्रभाव

डॉ.इब्राहीम अली
सहायक प्राध्यापक संगीत
शा. कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन

सार-संक्षेप

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में ख़याल गायकी के समानान्तर 'तराना' एक ऐसी विधा है, जो राग तथा तालबद्ध होते हुए भी निरर्थक शब्दों का समूह माना जाता है। तराने का यही रूप बहुप्रचलित होते हुए भी इस विधा का एक ऐसा पृथक स्वरूप अस्तित्व में आया, जहाँ तराने के शब्दों में भी भारतीय शास्त्रीय संगीत के गाम्भीर्य के अनुकूल भाव खोजने के प्रयास किये गये। उस्ताद अमीर ख़ाँ प्रथम आधुनिक गायक हुये जो एक अलग दृष्टिकोण रखते हुये तराने पर खोज के लिये प्रवृत्त हुये। उनका विचार था कि ख़ुसरो द्वारा आविष्कृत तराना अपने मौलिक रूप में अध्यात्म से परिपूर्ण था। अरबी, फ़ारसी के सार्थक शब्दों का प्रयोग जप के समान शब्दों की पुनरावृत्ति के द्वारा किया जाता था। साथ ही फ़ारसी शेर तराने के अंतरे की जगह आते थे। उस्ताद अमीर ख़ाँ ने स्वयं अनेक रागों में रूबाईदार तराने की बंदिशें बनाई और गाई जैसे—हंसध्वनि, शुद्ध कल्याण, मालकौंस, चन्द्रकौंस, सुहा, जोग, पूरिया कल्याण इत्यादि। उन्होंने अनेक कवियों (ख़ुसरो, हफ़ीज़ आदि) के फ़ारसी काव्य को अपने तरानों की बंदिशों में प्रयुक्त किया और उसमें राग के भावानुकूल पद्य के चयन का विशेष ध्यान रखा। अपनी मान्यताओं को व्यवहारिक रूप देने के उद्देश्य से उनके जो प्रयास रहे उसका परिणाम यह हुआ कि तराने की बंदिश के ढाँचे और उसे विस्तार देने वाले अन्य तत्व(आलाप, सरगम, तान इत्यादि) प्रभावित हुये और परिणामस्वरूप तराना गायकी की एक पृथक शैली अस्तित्व में आई। जिसमें ख़याल की तरह शब्दार्थ और भाव को भी महत्त्व दिया गया। प्रस्तुत शोध-पत्र में उस्ताद अमीर ख़ाँ की तराना गायकी में तराने के तत्कालीन स्वरूप से हटकर जो विशेषताएँ दिखाई देती हैं उनमें उनकी चिन्तन को समझाने का प्रयास है विशेषकर उनके द्वारा तराने में प्रयोग किए फारसी के शब्दों की उपयोगिता को भी बतलाया है। वह भी इन अर्थों में कि ये मात्र शब्द नहीं उनके विशिष्ट अर्थ भी हैं।

शोध-पत्र

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में ख़याल गायकी के समानान्तर 'तराना' एक ऐसी विधा है,जो राग तथा तालबद्ध होते हुए भी निरर्थक शब्दों का समूह माना जाता है। किन्तु ध्यान देने पर यह भी स्पष्ट हो जाता है कि तराने के इन निरर्थक शब्दों को गढ़ने के लिये भी एक विशिष्ट शब्दावली परम्परागत रूप से प्रचलित हो गई है। तराने का यही रूप बहुप्रचलित होते हुए भी इस विधा का एक ऐसा पृथक स्वरूप अस्तित्व में आया, जहाँ तराने के शब्दों में भी भारतीय शास्त्रीय संगीत के गाम्भीर्य के अनुकूल भाव खोजने के प्रयास किये गये।

तराने की इस पृथक् शाखा को दृष्टिगोचर रखते हुये डॉ. प्रभा अत्रे तराने की गायन शैली पर निम्नानुसार प्रकाश डालती हैं—

''आज आम तौर से हमें तराने के दो प्रकार सुनने को मिलते हैं एक तराने का अपना अंग है—जिसका मतलब है कि लय को बढ़ाना और सितार के अंग से विस्तार करना दूसरा है—द्रुत ख़याल के ढंग पर तराना प्रस्तुत करना। इसमें आलाप-तान अंग ज्यादा रहता है।'' [1]

ख़ुसरो के दर्शन और साहित्य का अमीर ख़ाँ पर सर्वाधिक प्रभाव उनकी तराना गायकी पर पड़ा। उस्ताद अमीर ख़ाँ की यह मान्यता थी कि ख़ुसरो द्वारा तराने का आविष्कार हुआ और इस सम्बन्ध में स्पष्ट एवं विश्वसनीय तथ्य सामने लाने के उद्देश्य से तराने एवं उसके शब्दों के गूढ़ अर्थ पर शोधकार्य के लिये काफी पहले से ही उत्सुक एवं अन्वेषणशील थे। तराने के सम्बन्ध में प्रचलित विविध मान्यताओं एवं ऐतिहासिक तथ्यों को भी उन्होंने विचाराधीन रखा। इस प्रकार वे प्रथम आधुनिक गायक हुये जो एक अलग दृष्टिकोण रखते हुये तराने पर खोज के लिये प्रवृत्त हुये। इस सम्बन्ध में उनका स्वयं का एक संस्मरण यहाँ उल्लेखनीय है—

''लोगों से मैं अक्सर सुनता था कि तराने का कोई अर्थ नहीं। मैंने सोचा तराने के बारे में सब-कुछ पता करूँ। दिल्ली में मेरे एक शायर दोस्त थे, बिस्मिल सईदी। एक दिन उन्होंने ख़ुसरो की लिखी एक सवाई सुनाई। हमारे यहाँ ऐसा है कि आदम का जब पुतला बनाया गया तब रूह डालने के लिये रूह को हुक्म हुआ। मगर रूह काल-कोठरी में जाने को राज़ी नहीं हुई। हज़रत दाऊद ने फिर रूह को एक लेहन सुनाया तो रूह डूब गई और पुतले में चली गई। इसी पर रुबाई सुनाई—

'आँरोज़ के रूहे-पाक के आदम बबदन
हर चंद दराँनमी सुदस्तर्सबदन
खानन्द पलाएका बलहने-दाऊद
दस-दस दरतन दराद दरतन-दरतन'

मुझे लगा तराना यहीं से शुरू हुआ। ना दिर दानी तो दानी-एक किस्म का जप है, जिसे सूफ़ी लोग 'हाल' की अवस्था में दोहराते थे। मैं सोचता रहा, खोज करता रहा।'' [2]

तराने पर उन्होंने जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये वो संगीतकार, समीक्षक और संगीत-शास्त्रियों में व्यापक रूप से चर्चा का विषय बने। इस सम्बन्ध में संगीत समीक्षक प्रो. चन्द्रकांतलाल दास का मत निम्नानुसार है—

''उस्ताद अमीर ख़ाँ ने तराना पर शोध कर जो निष्कर्ष प्रस्तुत किया है, वह तर्क सम्मत और विश्वसनीय है'' [3]

उस्ताद अमीर ख़ाँ यह स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थे कि तराना निरर्थक शब्दों का ऐसा गीत प्रकार माना जावे जिसका प्रयोग तेज लय में जीव्हा- कौशल प्रदर्शित करने वाले शब्दोच्चारण और निरंतर बढ़ती जाने वाली लय में ध्वनि के विविध करतब दिखाने के उद्देश्य से किया जावे। उनका विचार था कि ख़ुसरो द्वारा अविष्कृत तराना अपने मौलिक रूप में अध्यात्म से परिपूर्ण था। अरबी, फ़ारसी के सार्थक शब्दों का प्रयोग जप के समान शब्दों की पुनरावृत्ति के द्वारा किया जाता था। जप की ऐसी प्रणाली को सूफ़ियों की भाषा में 'विरद' कहा जाता है साथ ही फ़ारसी शेर तराने के अंतरे की जगह आते थे। अर्थात् तराना भक्त के लिये ईश्वर से एकरूपता स्थापित करने का एक माध्यम था। परवर्ती काल में उन गायकों ने इस गायन शैली का रूप बदल डाला जो अरबी और फ़ारसी भाषाओं से अनभिज्ञ थे तथा अंतरे में आने वाले फ़ारसी शेर के स्थान पर पखावज व तबले के बोल भर दिये और तराने के बोलों को अर्थहीन बना दिया। सूफियों की ईश्वरोपासना से तराने का सम्बन्ध अमीक हनफी इस प्रकार स्पष्ट करते हैं—

''उनका (अमीर ख़ाँ) विचार यह था कि तराने का रूप सूफियों की आराधना 'ज़िक्र' से निरूपित था जिस प्रकार सूफी अपने 'ज़िक्र' में नामजप करते हैं उसी प्रकार तराने में भी बोलों की तकरार(पुनरावृत्ति) होती है। अमीर ख़ाँ साहब सोचते थे कि तराने के बोल अरबी- फ़ारसी शब्दों में रहस्यात्मक(गुप्ताक्षर) रूप है।[4]''

तराने के प्रचलित शब्दों को अरबी-फ़ारसी के शब्दों का अपभ्रंश प्रमाणित करने के उद्देश्य से उन्होंने अपनी खोज द्वारा अरबी-फ़ारसी के तराने से साम्य रखने वाले शब्द प्रस्तुत किये। ऐसे शब्दों की अर्थ सहित सूची निम्नानुसार है—

दर तन आ - तन के अंदर आ
नादिर दानी - तू सबसे ज्यादा जानता है
तनदरदानि - तन के अंदर का जानने वाला
दरा - अंदर आ
तनन्दरा - तन के अंदर आ
तोम - मैं तेरा हूँ
ओदानी - वह (ईश्वर) जानता है
तू दानी - तू जानता है
ए-ल-लयी - ए अली
येल्ला - या अल्लाह
यलली - या अली

इस सूची के अलावा अला, अलहिला, लिल्ला, अललुम इत्यादि परमेश्वर सूचक शब्द हैं, जिनका मूल अल्लाह शब्द है।

प्रख्यात गायिका और संगीत में शोधकर्ता डॉ. प्रभा अत्रे की तराने से सम्बन्धित धारणा अमीर ख़ाँ की उपरोक्त मान्यता से काफी साम्य रखती है, जो उनके लेख के निम्नांकित अंश से ज्ञात होती है—

''13वीं सदी में अमीर ख़ुसरो नामक बहुत बड़े संगीतज्ञ हो गये हैं, जिन्होंने कौल, कल्बाना, नक्शो- गुल, तराना जैसे भक्तिरस के गायन के पाँच प्रकार संगीत जगत को भेंट किये। कालान्तर में तराने को छोड़कर बाकी सब लुप्त हो गये और तराने का स्वरूप भी बदल गया। तराने का जन्म अर्थपूर्ण शब्दों से हुआ, जैसे—''दर आ तनम'' का अर्थ है—तू मेरे तन में आ और 'यो अल्ला', जिसका रूप अब बदल कर यलली-यलली हो गया। बाद में जो कलाकार इन शब्दों का सही अर्थ समझने में असमर्थ रहे, उन्होंने इन शब्दों का गलत उच्चारण कर इस गायन को अर्थहीन शब्दों का एक गायन प्रकार बना दिया।'' [5]

चूँकि अमीर ख़ुसरो फ़ारसी भाषा के दिग्गज कवि थे और संगीत रचयिता के रूप में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। अत: अमीर ख़ाँ साहब मानते हैं कि, खुसरो ने तराने की भी कई बंदिशें बनाई होंगी। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि प. विष्णु नारायण भातखण्डेकी क्रमिक पुस्तक मालिका में भी तराने की ऐसी परम्परागत बंदिशें उपलब्ध हैं। जिनके अंतरे में ख़ुसरो की रूबाईयाँ हैं। उदाहरणार्थ राग- काफी में एक तराने का अन्तरा प्रस्तुत है जिसके बोल निम्नानुसार है—

''खल्के में गोयद् के ख़ुसरो
बुत परस्ती में कुनद
आरे आरे में कुनद्वा
खल्के मारा कारनेस्तन'' [6]

ख़ुसरो के समय में तराने की जो शैली रही होगी, उस्ताद अमीर ख़ाँ उसे तराने का मूल रूप मानते हुये ख़ुसरो के चलन को फिर से ज़िन्दा करने के उद्देश्य से उन्होंने स्वयं तराने की बंदिशें बनाना प्रारम्भ किया।

ख़ुसरो की एक 'कलबाना' बंदिश है जिसे सूफी परम्परा के गायक गाते हैं। उस्ताद अमीर ख़ाँ ने इसे शास्त्रीय संगीत में पुन: प्रचलित किया। 'कलबाना' एक प्रकार का सूफ़ीयाना काव्य है जिसका सम्बन्ध आत्मा-परमात्मा से होता है और कव्वाली की शैली में गाया जाता है।'कलबाना' की प. अमरनाथ द्वारा की गई परिभाषा निम्नानुसार है—

'कलबाना', आत्मा का समानार्थी उर्दू शब्द है कल्ब। विशेष रूप से आत्मा से सम्बन्धित सूफ़ी काव्य-कलबाना, कव्वाली की शैली में गाया जाता है।'' [7]

कलबाना की उपरोक्त बंदिश राग-दरबारी में निबद्ध करते हुये मध्यलय एक ताल में उस्ताद अमीर ख़ाँ ने गाई, जो निम्नानुसार है—

स्थाई : यारे- मन बिया बिया
दरतन तदीम, तननन दीम तोम तननन

अंतरा : बलबम रसीदा जानम,
तो बिया के ज़िन्दमानम
पस अज़ाँ के मन ना मानम
बचेकार ख़्वाही आमद

हिन्दी अनुवाद

स्थाई : मेरे दोस्त आ जाओ- आ जाओ
तन के अंदर आ जाओ

अंतरा : मेरी जान होंठों तक आ चुकी है
तुम आ जाओ कि मैं ज़िन्दा रहूँ।
यदि मैं न रहूँगा तो बाद में तेरा
आना किस काम आयेगा।

यहाँ ख़ुसरो ने आत्मा-परमात्मा के सम्बन्ध को प्रेमी-प्रेमिका की उपमा देते हुये वियोग की करुणामय अभिव्यक्ति की है।

अनेक रागों में उस्ताद अमीर ख़ाँ ने रूबाईदार तराने गाये। जैसे— हंसध्वनि, शुद्ध कल्याण, मालकौंस, चन्द्रकौंस, सुहा, जोग, पूरिया कल्याण इत्यादि।रूबाईदार तराने का अर्थ स्पष्ट करते हुये प. अमरनाथ इसकी निम्नानुसार व्याख्या करते है—

रूबाईदार तराना—''रूबाई का अर्थ है दो अथवा चार पंक्तियों की कविता में विचार की पूर्ण अभिव्यक्ति और जिन तरानों में रूबाई गाई जाती है, वे रूबाईदार तराने कहलाते हैं।''[8]

तराने के शब्दों की सार्थकता के सम्बन्ध में जो उनके विचार थे, उन्हें व्यवहारिक रूप देने के उद्देश्य से अमीर ख़ाँ साहब ने ख़ुसरो के अतिरिक्त अन्य फ़ारसी कवियों के फ़ारसी काव्य को भी अपने तराने की बंदिशों में प्रयुक्त किया और उसमें राग के भावानुकूल पद्य के चयन का विशेष ध्यान रखा उदाहरणार्थ प्रसिद्ध फ़ारसी कवि हफ़ीज़ की रूबाइयाँभी तरानों में गाईं।

तराने के सम्बन्ध में पूर्व में वर्णित अपनी पृथक् मान्यता के आधार पर उस्ताद अमीर ख़ाँ नें 'इंडियन कॉसिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स' द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'म्युजिक ईस्ट एंड वेस्ट' के लिये एक लेख भी लिखा था।अपनी मान्यताओं को व्यवहारिक रूप देने के उद्देश्य से उनके जो प्रयास रहे उसका परिणाम यह हुआ कि तराने की बंदिश के ढाँचे और उसे विस्तार देने वाले अन्य तत्व (आलाप, सरगम, तान इत्यादि) प्रभावित हुये और परिणामस्वरूप तराना गायकी की एक पृथक शैली अस्तित्व में आई। जिसमें ख़याल की तरह शब्दार्थ और भाव को भी महत्त्व दिया गया, यहाँ तक कि उनके गायन में तराना कभी कभी द्रुत ख़याल का विकल्प भी बन गया।

उस्ताद अमीर ख़ाँ की गायन शैली में तराने को वही स्थान प्राप्त है जो कि छोटे ख़याल को। अत: सांगीतिक तत्वों की दृष्टि से उनकी ख़याल गायकी और तराने की पेशकश को समतुल्य रख करसमझना होगा। कारण यह है कि विलम्बित ख़याल के बाद जिस प्रकार मध्य अथवा द्रुत लय में उसी राग का छोटा ख़याल प्रस्तुत करते थे, उसी प्रकार विलम्बित ख़याल के बाद छोटे ख़याल के विकल्प के रूप में उन्होंने तराने को स्थान दिया इसीलिये आचार्य बृहस्पति ने 29 जून, 1974 को आकाशवाणी के अखिलभारतीय कार्यक्रम में उस्ताद अमीर ख़ाँ के तराने की शैली के सम्बन्ध में कहा—''ख़ाँ साहब ख़याल अंग का तराना गाया करते थे।''

परम्परागत रूप में तराना द्रुत लय के काम और उच्चारण कौशल्य को अभिव्यक्त करने का माध्यम माना जाता रहा है। उसमें अति द्रुत लय में बंदिश का प्रस्तुतिकरण अति द्रुत तानों के साथ किया जाता है। और अन्त में उसी अति द्रुत लय में लयखण्डों की विविधता के साथ दिर, दिर, तन, नन, तोम इत्यादि शब्दों को उपज अंग से पेश किया जाता है। ये शब्द तंत्रकारी में रज़ाख़ानी गत के अंतिम भाग झाला के सदृश्य होते हैं। अत: स्वर और साहित्य की अपेक्षा स्वाभाविक रूप से लय को अधिक अवसर प्राप्त हो जाता है, क्योंकि शब्द निरर्थक होते हैं। और स्वर पर लय हावी होती है। इसी कारण तराना को निर्गीत माना जाता है। किन्तु इन सबसे अलग हटकर अमीर ख़ाँ साहब नें ख़याल के समान ही तराने में भी स्वर को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया और सार्थक साहित्य उसका सहायक बना।

तराने की बंदिश के पश्चात् आने वाले विस्तार पक्ष में आलापचारी की यह विशेषता थी कि वहाँ भी उन्होंने कोरे आकार इत्यादि को माध्यम न बनाते हुये बोल आलाप के ढंग पर मुखड़े के शब्द को प्रयुक्त किया है। बोल आलापों में शब्दों की अदायगी और स्वरों का लगाव उतना ही भावपूर्ण हुआ है जितना कि छोटे ख़्याल में। यहाँ तराने के शब्दों को सार्थक मानने का उनका चिंतन चरितार्थ होता दिखाई देता है। सरगम व बोलतान का प्रस्तुतिकरण वे छोटे ख़याल के सदृश्य ही करते थे। छोटे ख़याल से पृथक एक विशेषता उनके तराना गायन में यह थी कि अंतरे में आने वाली रूबाई का अंत एक विशिष्ट ढंग की अतिद्रुत तान (सामान्यतया एक मात्रा में तीन अथवा चार स्वर समाते हुये) से करते थे जो मध्य सप्तक के मध्य से प्रारम्भ होकर तार सप्तक तक पहुँचती और उसी गति से अवरोह करते हुये स्थाई के मुखड़े से जा मिलती। इस प्रकार की तान के प्रयोग 78 आर. पी. एम. ग्रामोफोन रेकॉर्ड में—राग चन्द्रकौंस, एल. पी. में—राग मेघ, आकाशवाणी दिल्ली के कार्यक्रम में—राग जोग, शुद्ध कल्याण के तरानों में उपलब्ध है। उनके कुछ तरानों के अंतरे रूबाई रहित भी हैं। किंतु वहाँ उन्होंने तबला-पखावज के बोलों को सम्मिलित नहीं किया। उदाहरणार्थ अभोगी एवं बागेश्री के तराने। एल. पी. नं. ई.सी.एल. पी.-41546 में उपलब्ध बागेश्री के तराने में तो अंतरा गाया ही नहीं है।

निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि उस्ताद अमीर ख़ाँ की तराना गायकी में तराने के तत्कालीन स्वरूप से हटकर जो विशेषताएँ दिखाई देती हैं वह उनके सांगीतिक एवं साहित्यिक चिन्तन के कारण ही सम्भव हुयीं।

पाद-टिप्पणियाँ

1. संगीत- नवम्बर 1967 पृ. 28 ''भारतीय संगीत की दो शैलियाँ'' लेखिका : प्रभा अत्रे
2. संगीत-नवम्बर 1971 पृ. 25 'संगीत साधकों से भेंट-उस्ताद अमीर ख़ाँ भेंटकर्ता -शंभुनाथ मिश्र
3. संगीत-मई 1973 पृ. 37-42 ''उस्ताद अमीर खाँ और उनकी कला'' ले. प्रो. चंद्रकांतलाल दास
4. साप्ताहिक ''दिनमान'' 3 मार्च, 1974 पृ. 36 उस्ताद अमीर खाँ तुम्हरे सरन अब कियो विश्राम ले. अमीक हनफी
5. संगीत- नवम्बर 1967 पृ. 27 ''भारतीय संगीत की दो शैलियाँ'' लेखिका : प्रभा अत्रे
6. 'क्रमिक पुस्तक मालिका' भाग 2 पृ. 337 राग काफी ले. पं. विष्णुनारायण भातखंडे
7. Qalbaanaa; Qalab is the word for soul in Urdu.Qalbaanaa, the sufi verse relating specifically to the soul, is sung in quwaalee style". Living Idioms in Hindustani Music: A dictionary of terms and terminology page no. 89 Author PanditAmarnath.
8. Rubaaeedaartaraanaa:-" Rubaaee is a complete expression of poetic thought, in one or two couplets, and the taraanaa-s in which Rubaaee-s are sung are known as RubaaeedaarTaraanaa-s" Living Idioms in Hindustani Music: A dictionary of terms and terminology page no. 95 Author PanditAmarnath.

सन्दर्भ

अत्रे, प्रभा, डॉ., ''भारतीय संगीत की दो शैलियाँ'' संगीत नवम्बर 1967, पृ. 27-28

दास, चंद्रकांतलाल, प्रो. ''उस्ताद अमीर खाँ और उनकी कला'' संगीतमई 1973, पृ. 37-42

हनफी, अमीक, ''उस्ताद अमीर ख़ाँ तुम्हरे सरन अब कियो विश्राम'' साप्ताहिक दिनमान 3 मार्च, 1974 पृ. 36

मिश्र, शंभुनाथ, ''संगीत साधकों से भेंट-उस्ताद अमीर ख़ाँ'' संगीत नवम्बर 1971पृ. 25

खण्डे, विष्णुनारायण, प. क्रमिक पुस्तक मालिका-भाग 2,हाथरस, संगीत कार्यालय हाथरस, प्रकाशन 75 1997